माननीय न्यायमूर्ति के. कन्नन

माननीय न्यायमूर्ति के. कन्नन के समक्ष

राम सरूप - *याचिकाकर्ता*

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य - *उत्तरदाता*

1999 का सीडब्ल्यूपी नंबर 7697

9 फ़रवरी, 2015

भारत का संविधान, 1950 - अनुच्छेद 226 - भारतीय दंड संहिता, 1860 - धारा 354 और 376 - झूठे आपराधिक मामले के लिए मुआवजा - याचिकाकर्ता की बेटी के साथ बलात्कार और हत्या की गई - पुलिस ने याचिकाकर्ता को अपनी ही बेटी के कथित बलात्कार और हत्या के लिए गिरफ्तार किया और मुकदमा चलाया - आपराधिक अदालत ने उसे बरी कर दिया - याचिकाकर्ता ने आरोप लगाया क एस.एच.ओ ने पुलिस अधीक्षक के साथ मिलकर उसे परेशान किया और असली दोषियों के साथ मिलकर उसे परेशान किया, उसे फंसाया गया है - याचिकाकर्ता ने मुआवजे की मांग की - निर्णय कि, सीबीआई जांच ने बताया कि अभियोजन एजेंसी ने ठीक से जांच नहीं की - सीबीआई की रिपोर्ट ने आपराधिक कृत्य के लिए याचिकाकर्ता के जिम्मेदार होने की असंभवता की ओर भी इशारा किया - सीबीआई ने संकेत दिया कि संदिग्धों से पूछताछ नहीं की गई थी और यहां तक कि अपराध

स्थल से उंगलियों के निशान भी एकत्र नहीं किए गए थे और ना ही संधिग्दों के साथ तुलना की गई थी - जिस व्यक्ति ने अपनी बेटी को खो दिया था, उसे बलात्कारी और हत्यारे के रूप में संदिग्ध होने का अपमान सहना पड़ा -उसे बुरे तौर से उत्पीड़न का सामना करना पड़ा और संदिघ्डों को अनुचित अन्वेषण के तहत आज़ाद छोड़ दिया गया - इससे पहले, अदालत ने एक अन्य जनहित याचिका में कहा था कि जांच निष्पक्ष नहीं थी - इस प्रकार, सिद्धांत यह है कि अनुचित कारावास और अभियोजन के माध्यम से पुलिस द्वारा परेशान एक निर्दोष व्यक्ति को मुआवजा दिया जाना चाहिए, लागू होगा - राज्य को, याचिकाकर्ता को, याचिका की तारीख से भुगतान तक, 9 प्रतिशत की ब्याज दर के साथ 5 लाख रुपये का मुआवजा देना चाहिए - राज्य को उक्त राशि एसएचओ, जांच अधिकारी और पुलिस अधीक्षक- जो इस तरह की प्रेरित जांच के लिए संरक्षक थे, से वसूल करनी चाहिए।

निर्णय , कि केवल आपराधिक मामले में बरी होना, कार्रवाई का कारण नहीं बनता है। हस्तक्षेप की दो परिस्थितियां यह हैं कि उच्च न्यायालय ने 1994 के सीडब्ल्यूपी संख्या 11383 में जनहित याचिका में आपराधिक मुकदमे के अंत में पाया कि अभियोजन एजेंसी ने ठीक से जांच नहीं की थी। इसमें एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, अर्थात् एक डीएसपी का असामान्य हस्तक्षेप पाया गया , जिन्हें तब स्थानांतरित कर दिया गया था जब उन्होंने फिर से जांच के लिए आवेदन किया

था। सीबीआई की रिपोर्ट में याचिकाकर्ता के आपराधिक कृत्य के लिए जिम्मेदार होने की असंभवता की ओर इशारा किया गया था। अदालत ने पाया कि अभियोजन पक्ष ने जिले सिंह और दो गवाहों, जिन्होंने रिकवरी मेमो को सत्यापित किया था, पर भरोसा किया था, वह हेरफेर वाले साक्ष्य है। सीबीआई ने आरोप लगाया कि 3 संदिग्धों से पूछताछ नहीं की गई थी और यहां तक कि घटनास्थल से उंगलियों के निशान भी एकत्र नहीं किए गए थे और ना ही उनकी 3 संदिग्धों के साथ तुलना नहीं की गई थी। दुर्भावना का अनुमान केवल परिस्थितियों से लगाया जा सकता है और दुर्भावना का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं हो सकता है। इस मामले में, प्रतिवादी संख्या २ पुलिस अधीक्षक द्वारा जांच में हस्तक्षेप करने के रूप में निश्चित संदर्भ है और यहां तक कि उत्तरदाताओं 4 और 5 के बयान ने जांच की प्रकृति का समर्थन करने के लिए पुलिस अधीक्षक की सक्रिय उपस्थिति को दिखाया, जो प्रतिवादी नंबर 4 कर रहा था। मैं राज्य के इस तर्क को खारिज करता हूँ जो यह कहते है कि सीबीआई की रिपोर्ट को सुसमाचार सत्य के रूप में नहीं लिया जा सकता। दूसरी ओर, असहाय पीड़ित पर, मुकदमा चलाने में पुलिस द्वारा अपनाए गए मूर्खतापूर्ण दृष्टिकोण को साबित करता है। एक व्यक्ति जिसने अपनी ही बेटी को एक भयानक तरीके से खो दिया था, उसे बलात्कारी और हत्यारे के रूप में एक संदिग्ध की सबसे बुरे रूप बदनामी का सामना करना पड़ा था। मैं याचिकाकर्ता का दावा,की, गिरफ्तार किए जाने से पहले 4/5 दिनों तक संदिग्धों के घर में हिरासत में रखा

गया था, एक झूठा मामला दर्ज किया गया था और उसे फंसाते हुए सच्चाई की उपेक्षा करते हुए मुकदमा चलाया गया था, पर इससे ज्यादा कोई भी पुष्टि नहीं करना चाहूंगा। अगर पुलिस तंत्र को राजनीतिक रूप से बड़े लोगों द्वारा सक्रिय किया जा सकता है, जिन्होंने न्याय की प्रक्रिया को पटरी से उतार दिया और यहां तक कि बलात्कारियों को पकड़ में ना लाने में सक्षम बनाया और संदिग्धों को छोड़ दिया, तो याचिकाकर्ता की कठिनाई की भरपाई पैसे के रूप में की जानी चाहिए। दुर्भावना, एक ऐसी स्थिति में है कि एक निर्दोष व्यक्ति पर मुकदमा चलाने के अलावा, गंभीर संदिग्धों को अयोग्य जांच और असली आरोपियों को स्क्रीन करने के लिए प्रेरित प्रयास द्वारा छोड़ दिया गया। बेटी की मृत्यु 27-12-1993 को हो गई और वर्ष 1999 में मामला दया होने के बाद, यह मामला 16 वर्षों से लंबित रहा है।

(पेरा 6)

आगे यह अभिनिर्णित किया गया कि, हालांकि दोनों पक्षों ने बड़ी मात्रा में केस लॉ पर भरोसा किया, मृतक के पक्ष में यह तर्क दिया गया कि सार्वजनिक कानून का उपाय उस व्यक्ति के लिए उपलब्ध होगा जिसे अवैध रूप से हिरासत में लिया गया है और गलत तरीके से मुकदमा चलाया गया है और प्रतिवादियों के पक्ष का यह कहना है कि केवल बरी होने से दुर्भावना साबित नहीं हो सकती है और आरोप के लिए सिविल कोर्ट में विस्तृत सबूत की आवश्यकता होगी - मैं मामले

के कानून को पुन: प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं, क्योंकि, मैं इस मामले में दुर्भावना का निष्कर्ष इस बनाव पर निकालूंगा कि अदालत ने एक अन्य जनहित याचिका में भी दर्ज किया था कि जहां जांच निष्पक्ष नहीं थी; और सीबीआई की रिपोर्ट, अयोग्य जांच के बारे में अदालत के विचार, वहाँ प्रेरित परीक्षण सिद्धांत- जो कि अनुचित कारावास और अभियोजन के माध्यम से पुलिस द्वारा परेशान किए गए एक निर्दोष व्यक्ति को मुआवजा दिया जाना चाहिए, इस मामले में लागू होता है। ***राज्य को, याचिकाकर्ता को, याचिका की तारीख से भुगतान तक, 9 प्रतिशत की ब्याज दर के साथ 5 लाख रुपये का मुआवजा देना होगा -*** राज्य प्रतिवादी 2 और 4 जो की, ***एसएचओ, जांच अधिकारी और पुलिस अधीक्षक*** है,के खिलाफ वसूली प्राप्त करने के लिए सक्षम होगा, जो थे

(पैरा 7)

आर.एस.बैंस, वकील- ***याचिकाकर्ता के लिए।***

केशव गुप्ता, सहायक महाधिवक्ता, हरियाणा।

वरिष्ठ अधिवक्ता जीएस पूनिया के साथ वकील मनदीप कौर - प्रतिवादी नंबर के लिए ।

एच.एस.गिल, वरिष्ठ अधिवक्ता, के साथ वकील आर.के.धीमान- प्रतिवादी संख्या 4 और 5 के वकील आर.के.धीमान।

राम सरूप बनाम हरियाणा राज्य और अन्य

माननीय न्यायमूर्ति के. कन्नन

<u>निर्णय</u>

माननीय न्यायमूर्ति के. कन्नन

1. याचिका स्वतंत्रता और गरिमा के उल्लंघन के लिए पर्याप्त मुआवजा देने के लिए है, जिसमें याचिकाकर्ता पर आईपीसी की धारा 376 के तहत अपनी ही बेटी के खिलाफ, बलात्कार के अपराध के लिए, दुर्भावनापूर्ण रूप से मुकदमा चलाया गया था। याचिकाकर्ता ने बताया कि 27.12.1993 को घर लौटने पर उसनेव पाया कि उसकी बेटी के साथ बलात्कार और हत्या कर दी गई थी। उन्होंने तुरंत पुलिस में शिकायत दर्ज कराई थी कि यह अज्ञात व्यक्तियों द्वारा किया गया था और जांच करने का अनुरोध किया था। याचिकाकर्ता के अनुसार, उन्होंने एसएचओ-ज्ञान सिंह को 3 संदिग्धों के नाम दिए थे, जिन्हें चौथे प्रतिवादी के रूप में पेश किया गया था, लेकिन जांच को ठीक से निर्देशित करने की बजाय, चौथे प्रतिवादी ने कुरुक्षेत्र के पुलिस अधीक्षक ए.के.ढुल के साथ मिलकर याचिकाकर्ता को संदिग्ध व्यक्तियों के घर में हिरासत में ले लिया और बाद में उसे गिरफ्तार कर लिया और अपनी बेटी की कथित हत्या और बलात्कार के लिए मुकदमा

चलाया। याचिकाकर्ता ने कहा कि ग्रामीण खुद नाराज थे और सुदेश कुमारी नाम की एक सामाजिक कार्यकर्ता ने खुद से सबूत एकत्र किए और 1994 के सीडब्ल्यूपी नंबर 11383 में उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था क्योकि उसने पाया कि मुख्य संदिग्धों के उच्च राजनीतिक संबंध थे और विधानसभा के अध्यक्ष खुद संदिग्धों को बचाने में रुचि रखते थे। उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को दर्ज किया कि हस्तक्षेप के लिए मुख्यमंत्री को अभ्यावेदन दिया गया था और किसान और मजदूर सभी अनुचित जांच के खिलाफ विरोध के स्वर में शामिल हो गए थे। उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की -

"इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों ने संदेह से परे साबित कर दिया है कि मामले में जांच ठीक से नहीं की गई थी और पूरी नहीं हुई थी। जांच एजेंसी द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण आकस्मिक था और विशिष्ट नहीं था। असली दोषियों को बचाने के प्रयास किए गए। प्रतिवादी एजेंसियों को इस तथ्य के बारे में पता था कि मृतक के पिता के अलावा अन्य व्यक्ति अपराध के लिए जिम्मेदार थे।

अदालत ने इस तथ्य पर भी ध्यान दिया कि पुलिस उपाधीक्षक श्री ओम प्रकाश ने फिर से जांच के लिए एक आवेदन दायर किया था, लेकिन उन्हें अपराध शाखा से

स्थानांतरित कर दिया गया था, जिसे अदालत ने स्पष्ट रूप से जांच में हस्तक्षेप माना था। अभियोजन पक्ष ने अनिवार्य रूप से एक गैर-न्यायिक स्वीकारोक्ति पर कार्रवाई की थी, जिसे याचिकाकर्ता ने खुद जिले सिंह के सामने दिया था और तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता के कपड़ों में खून के धब्बे थे, जिससे अदालत ने पाया कि यह एक उपयुक्त मामला था जहां लिए पूर्ण न्याय करने के लिए अदालत को सीबीआई जांच का आदेश देने चाहिए और राम सरूप की दोषसिद्धि या बरी होना अपने आप में पर्याप्त नहीं होगा। अदालत ने कहा, *"यह राज्य और आम जनता के हित में है कि मामले को पूरी तरह से साबित किया जाना चाहिए, जांच की जानी चाहिए और एक स्वतंत्र एजेंसी द्वारा जांच की जानी चाहिए।*

2. सीबीआई ने पाया कि याचिकाकर्ता को गलत तरीके से फंसाया गया है। अदालत ने कहा कि जिले सिंह, जो खुद आईपीसी की धारा 354 के तहत आअपराध के लिए मुकदमे का सामना कर रहे थे, अपने बयान से पलट गए थे और कहा था कि याचिकाकर्ता ने कभी भी कोई न्यायेतर स्वीकारोक्ति नहीं की। सीबीआई ने यह भी पाया कि वैज्ञानिक प्रयोगशाला की रिपोर्ट से पता चला है कि मृतक के अंत:वस्त्रों में पाए गए वीर्य के धब्बे याचिकाकर्ता पर किए गए डी.एन.ए परीक्षण से मेल नहीं खाते थे। यह भी पाया गया कि हत्या के लिए इस्तेमाल किए गए कथित हथियार के रिकवरी मेमो दो गवाहों की सहायता से झूठे तरीके से बनाए गए थे। सीबीआई की रिपोर्ट

एक गंभीर अभियोग था कि मामला पूरी तरह से गलत रास्ते पर चला गया था। आपराधिक अदालत ने अंततः सीबीआई रिपोर्ट और अभियोजन पक्ष के गवाहों के सबूतों की अविश्वसनीयता पर भरोसा करते हुए उन्हें बरी कर दिया। सीबीआई ने पाया कि साइट पर जो उंगलियों के निशान उपलब्ध होने चाहिए थे, वे एकत्र नहीं किए गए थे। 3 संदिग्धों की चिकित्सकीय जांच नहीं की गई थी और जब 2 ½ साल बाद उन पर मुकदमा चलाया गया , तो आरोप को बनाए रखने के लिए कोई सबूत नहीं पर्याप्त हो सका। इसलिए, 3 अन्य संदिग्धों को भी छोड़ दिया गया। झूठे सबूत देने के लिए, पुलिस अधिकारियों पर मुकदमा चलाया गया लेकिन उन्हें बरी कर दिया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि बरी किए जाने के खिलाफ इस अदालत के समक्ष एक पुनरीक्षण लंबित है।

3. प्रतिवादी- 3 - डीएसपी की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ वकील प्रस्तुत किया कि सीबीआई ने स्वयं तीसरे प्रतिवादी को जिम्मेदार नहीं पाया। प्रतिवादी संख्या 4 और 5 की ओर से पेश हुए वरिष्ठ वकील ने कहा कि हर समय उनकी खुद की जांच को उच्च अधिकारियों द्वारा समर्थित किया गया था और उन्होंने जांच की प्रक्रिया का समर्थन किया था। उनके अनुसार, उन्होंने जांच को उसी तरह से आगे बढ़ाया जिस तरह से स्थिति की आवश्यकता थी और उनकी कार्रवाई में कोई दुर्भावना नहीं थी। इस बात

से आम इनकार किया जाता है कि उनकी जांच कुरुक्षेत्र के पुलिस अधीक्षक श्री ए.के.ढुल की मिलीभगत से रची गई थी।

4. राज्य के वकील यह इंगित करते है कि राय की दो धाराएं थीं। राज्य ने अपनी जांच पर याचिकाकर्ता के खिलाफ एकत्र की गई सामग्री पर कार्रवाई की और सीबीआई ने 3 महत्वपूर्ण गवाहों के सबूतों को खारिज कर दिया, अर्थात् - जिले सिंह , जिनके सामने न्यायेतर स्वीकारोक्ति की गई थी और दो गवाह जिन्होंने कथित तौर पर इस्तेमाल किए गए हथियार के लिए रिकवरी मेमो को सत्यापित किया था। वकील ने तर्क दिया कि केवल यह तथ्य कि सीबीआई ने राज्य की जांच को दोषी ठहराया है का यह मतलब नहीं है कि दुर्भावना का सबूत या सीबीआई की रिपोर्ट सही थी।
5. यहां एक ऐसा मामला है जहां याचिकाकर्ता का रोना यह था कि इस तथ्य के बावजूद कि उसने संदिग्धों के नाम दिए थे, याचिकाकर्ता को वास्तव में उनके ही घर में हिरासत में रखा गया था और बुरे रूप से अपमान करने के लिए, उस पर ही अपनी बेटी के बलात्कार और हत्या के लिए मुकदमा चलाया गया था। जिस व्यक्ति ने अदालत में बयान दिया था कि याचिकाकर्ता ने उसे विश्वास से उसे बात बतायी थी, वह वास्तव में इस तरह के बयान से मुकर गया था और कबूल किया था कि याचिकाकर्ता ने उसे ऐसा कोई बयान नहीं दिया था। डीएनए और रक्त के नमूनों से पता

चला है कि अंडरगारमेंट और योनि स्वैब से वीर्य के दाग याचिकाकर्ता से संबंधित नहीं थे। याचिकाकर्ता को फंसाने के प्रयास की जांच की प्रगति स्पष्ट रूप से गलत थी। यदि आपराधिक अदालत ने उन्हें बरी किया है, तो वह केवल सीबीआई की रिपोर्ट पर नहीं था, बल्कि उनके द्वारा किसी भी अलग निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सकता था, क्योंकि वैज्ञानिक रिपोर्ट स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता के लिए अपरिहार्य परिस्थितियां प्रदान करती हैं। गलत तरीके से कैद और दुर्भावनापूर्ण अभियोजन के लिए नुकसान की कार्रवाई में, 3 परिस्थितियों को पूरा करने की आवश्यकता होती है

(i) आपराधिक मामले में दावेदार का अभियोजन;

(ii) आपराधिक मामले में बरी होना; और

(iii) अभियोजक की दुर्भावना का प्रमाण।

पहली दो परिस्थितियों को स्वीकार किया गया है। एकमात्र मुद्दा यह है कि क्या दुर्भावना का पर्याप्त सबूत है।

6. इस मामले में, केवल आपराधिक मामले में बरी होना, कार्रवाई का कारण नहीं बनता है। हस्तक्षेप की दो परिस्थितियां यह हैं कि उच्च न्यायालय ने 1994 के सीडब्ल्यूपी संख्या 11383 में जनहित याचिका में आपराधिक मुकदमे के अंत में पाया कि अभियोजन एजेंसी ने ठीक से जांच नहीं की

थी। इसमें एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, अर्थात् एक डीएसपी का असामान्य हस्तक्षेप पाया गया , जिन्हें तब स्थानांतरित कर दिया गया था जब उन्होंने फिर से जांच के लिए आवेदन किया था। सीबीआई की रिपोर्ट में याचिकाकर्ता के आपराधिक कृत्य के लिए जिम्मेदार होने की असंभवता की ओर इशारा किया गया था। अदालत ने पाया कि अभियोजन पक्ष ने जिले सिंह और दो गवाहों, जिन्होंने रिकवरी मेमो को सत्यापित किया था, पर भरोसा किया था, वह हेरफेर वाले साक्ष्य है। सीबीआई ने आरोप लगाया कि 3 संदिग्धों से पूछताछ नहीं की गई थी और यहां तक कि घटनास्थल से उंगलियों के निशान भी एकत्र नहीं किए गए थे और ना ही उनकी 3 संदिग्धों के साथ तुलना नहीं की गई थी। दुर्भावना का अनुमान केवल परिस्थितियों से लगाया जा सकता है और दुर्भावना का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं हो सकता है। इस मामले में, प्रतिवादी संख्या २ पुलिस अधीक्षक द्वारा जांच में हस्तक्षेप करने के रूप में निश्चित संदर्भ है और यहां तक कि उत्तरदाताओं 4 और 5 के बयान ने जांच की प्रकृति का समर्थन करने के लिए पुलिस अधीक्षक की सक्रिय उपस्थिति को दिखाया, जो प्रतिवादी नंबर 4 कर रहा था। मैं राज्य के इस तर्क को खारिज करता हूँ जो यह कहते है कि सीबीआई की रिपोर्ट को सुसमाचार सत्य के रूप में नहीं लिया जा सकता। दूसरी ओर, असहाय पीड़ित पर, मुकदमा चलाने में पुलिस

द्वारा अपनाए गए मूर्खतापूर्ण दृष्टिकोण को साबित करता है। एक व्यक्ति जिसने अपनी ही बेटी को एक भयानक तरीके से खो दिया था, उसे बलात्कारी और हत्यारे के रूप में एक संदिग्ध की सबसे बुरे रूप बदनामी का सामना करना पड़ा था। मैं याचिकाकर्ता का दावा,की, गिरफ्तार किए जाने से पहले 4/5 दिनों तक संदिग्धों के घर में हिरासत में रखा गया था, एक झूठा मामला दर्ज किया गया था और उसे फंसाते हुए सच्चाई की उपेक्षा करते हुए मुकदमा चलाया गया था, पर इससे ज्यादा कोई भी पुष्टि नहीं करना चाहूंगा। अगर पुलिस तंत्र को राजनीतिक रूप से बड़े लोगों द्वारा सक्रिय किया जा सकता है, जिन्होंने न्याय की प्रक्रिया को पटरी से उतार दिया और यहां तक कि बलात्कारियों को पकड़ में ना लाने में सक्षम बनाया और संदिग्धों को छोड़ दिया, तो याचिकाकर्ता की कठिनाई की भरपाई पैसे के रूप में की जानी चाहिए। दुर्भावना, एक ऐसी स्थिति में है कि एक निर्दोष व्यक्ति पर मुकदमा चलाने के अलावा, गंभीर संदिग्धों को अयोग्य जांच और असली आरोपियों को स्क्रीन करने के लिए प्रेरित प्रयास द्वारा छोड़ दिया गया। बेटी की मृत्यु 27-12-1993 को हो गई और वर्ष 1999 में मामला दया होने के बाद, यह मामला 16 वर्षों से लंबित रहा है।

7. हालांकि दोनों पक्षों ने बड़ी मात्रा में केस लॉ पर भरोसा किया, मृतक के पक्ष में यह तर्क दिया गया कि सार्वजनिक कानून का उपाय उस व्यक्ति के लिए उपलब्ध होगा जिसे अवैध रूप से हिरासत में लिया गया है और गलत तरीके से मुकदमा चलाया गया है और प्रतिवादियों के पक्ष का यह कहना है कि केवल बरी होने से दुर्भावना साबित नहीं हो सकती है और आरोप के लिए सिविल कोर्ट में विस्तृत सबूत की आवश्यकता होगी - मैं मामले के कानून को पुन: प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं, क्योंकि, मैं इस मामले में दुर्भावना का निष्कर्ष इस बनाव पर निकालूंगा कि अनुचित कारावास और अभियोजन के माध्यम से पुलिस द्वारा परेशान किए गए एक निर्दोष व्यक्ति को मुआवजा दिया जाना चाहिए, इस मामले में लागू होता है। इस मामले में दुर्भावना का अनुमान अदालत द्वारा पहले दायर एक अन्य जनहित याचिका में दर्ज किए गए निष्कर्ष से लगाया जा सकता है जहां जांच निष्पक्ष नहीं थी और सीबीआई की रिपोर्ट, अयोग्य जांच और प्रेरित मुकदमे के बारे में, अदालत के प्रथम दृष्टया दृष्टिकोण के लिए सामग्री के रूप में थी। ***राज्य को, याचिकाकर्ता को, याचिका की तारीख से भुगतान तक, 9 प्रतिशत की ब्याज दर के साथ 5 लाख रुपये का मुआवजा देना होगा।*** चौथे प्रतिवादी का कृत्य एक जांच अधिकारी के रूप में असमर्थनीय है और मैं , याचिकाकर्ता की पुष्टि, जिस में कहा गया कि प्रतिवादी-

पुलिस अधीक्षक इस प्रेरित जांच के मार्गदर्शक है, को मूल्यांकन किए गए मुआवजे का खामियाजा उठाना होगा। राज्य, प्रतिवादी 2 और 4, जो क्रमशः पुलिस अधीक्षक और जांच अधिकारी थे, के खिलाफ वसूली प्राप्त करने के लिए सक्षम होगा। इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से 4 सप्ताह की अवधि के भीतर याचिकाकर्ता को राशि का भुगतान किया जाएगा।

8. रिट याचिका को, प्रतिवादी 1, 2 और 4 के खिलाफ और याचिकाकर्ता के पक्ष में 10,000 रुपये की लागत के साथ अनुमति दी जाती है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

राम सरूप बनाम हरियाणा राज्य और अन्य

माननीय न्यायमूर्ति के. कन्नन

अनमोल कक्कड़

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer) करनाल, हरियाणा